औपनिवेशिक हरियाणा में कृषक दशा : एक विशलेषणात्मक अध्य्यन

गुरप्रीत सिंह
शोधछात्र, इतिहास विभाग
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र

दक्षिणी–पूर्वी पंजाब (आधुनिक हरियाणा) भारत के हृदय में एक छोटा सा क्षेत्र है । भारतीय संस्कृति और इतिहास में इस क्षेत्र का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है ।[1] इस की प्रशासनिक सीमाएं तत्कालीन राजनीति के अनुसार बदलती रही है । लेकिन इसकी भौगोलिक व प्राकृतिक सीमाएं ज्यूँ की त्यूँ बनी रही है । यहाँ की 90 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि से अपना जीवन निर्वाह करती रही है । सम्बन्धित क्षेत्र में शेष भारत की तरह यहां जमींदार वर्ग का अभाव था और परम्परागत खालसा–भूमि होने के कारण इस क्षेत्र में स्वतन्त्र किस्म के कृषक पाए जाते थे।

अंग्रेजों ने 1803 ई॰ में सर्जी–अंजन गांव की सन्धि के तहत दौलतराव सिंधियाँ को दक्षिणी–पूर्वी पंजाब के क्षेत्र को ब्रिटिश–ईस्ट इण्डिया कम्पनी को सोंपने के लिए मजबूर किया ।[2] परन्तु कम्पनी प्रशासन ने इस प्रदेश की प्रशासनिक दुविधाओं को मध्य नजर रखते हुए इस क्षेत्र को दो भागों में बांट दिया था । एक भाग को अंसाईड टेरिटरी कहा जाता था जो सीधे अंग्रेजों के अधीन था । दूसरा भाग देशी राजाओं को सौंप दिया था । जिन्होंने युद्ध में मराठों के विरुद्ध कम्पनी का साथ दिया था ।[3]

परन्तु यहाँ की स्वतन्त्रता प्रिय जनता ने अंग्रेजों के खिलाफ कड़ा विरोध जताया था । 1857 के विद्रोह की विफलता के उपरांत अंग्रेजों ने बदले की भावना से प्रेरित होकर इस क्षेत्र को 1858 ई॰ के अधिनियम के अन्तर्गत पंजाब में मिला दिया । जिसकी संस्कृति, रहन–सहन, भाषा, वेषभूषा आदि यहाँ के लोगों से बिल्कुल विपरित थी । और यह क्षेत्र अर्थात् दक्षिणी–पूर्वी पंजाब (आधुनिक हरियाणा) 1966 तक पंजाब सुबे का ही अंग बना रहा था।[4]

पंजाब के दक्षिणी–पूर्वी क्षेत्र के निवासियों का सबसे पुराना और मुख्य व्यवसाय कृषि था ओर कृषि करने का ढंग बहुत पुराना था तथा मुख्य व्यवसाय होते हुए अधिकतर लोग इस पर निर्भर थे।[5] इस क्षेत्र की विचित्र बात यह थी कि दूसरे व्यवसायों में अधिक आमदनी वालों को अधिक दर से और कम आमदनी वालों को कम दर से कर देना पड़ता था । लेकिन कृषि व्यवसाय में इस अधिकृत क्षेत्र में (दक्षिणी–पूर्वी पंजाब में) समान दर से कृषकों को कर देना पड़ता था जैसे 5 एकड़ वालों को कर उसी तरह से देना पड़ता था जैसे 500 एकड़ वालों को देना पड़ता था । जो कि कर वसूली का असमान तरीका था । कृषकों से 2/3 भाग कर के रूप में लिया जाता था।[6] अतः बड़े और छोटे कृषकों को एक ही लाठी से हांका जाता था । यदि अन्य व्यवसायों में व्यक्ति एक वर्ष में 5000 रू कमाता था तो उसको 5000 रूपये पर कर देना पड़ता था और यदि अगले वर्ष कुछ नहीं कमाता तो उसे कोई कर नहीं देना पड़ता था । परन्तु यहां के कृषक वर्ग की स्थिति इसके विपरीत नजर आई, यदि कृषक के पास फसल हुई या न हुई तो उसे हर हाल में प्रत्येक वर्ष भू–कर ब्रिटिश सरकार को देना अनिवार्य था । जो ब्रिटिश सरकार की कृषक वर्ग से भू–राजस्व के रूप में लिया गया कर प्रत्यक्ष रूप से शोषण सम्बन्धी नीति को प्रदर्शित करता था ।

सरकार भूमि पर अपना अधिकार समझती थी और कृषक भूमि पर उस समय तक खेती कर सकता था । जब तक वह सरकार को भू–कर देता था और कृषक द्वारा कर न देने की स्थिति में सरकार भूमि की नीलामी भी कर सकती थी । परन्तु सरकार ने कृषक को भूमि को गिरवी या बेचकर, कर देने का अधिकार दे रखा था।[7]

सरकार यह भी सोचती थी कि भूमि का इंग्लैण्ड की तरह साहूकारों के पास जाना अच्छा रहेगा और ये भूमि पर पूंजी लगाकर पैदावार बढ़ाएंगे जिससे सरकार को भी लाभ होगा । लेकिन इन साहूकारों ने कृषि क्षेत्र में ऐसा कुछ नहीं किया और फसल चक्र पर कर लेकर यह भूमि वाणिज्य कृषक या काश्तकारों को दे देते थे ।[8]

अब अंग्रेजी सरकार के साथ–साथ साहूकार वर्ग भी जमीन को फायदे का स्त्रोत मानने लगे थे और उसकी ओर आकर्षित हुए । सरकार की न्याय प्रणाली अनुसार जिसमें

यह प्रावधान था कि अगर कोई ऋणी निश्चित समय पर ऋण चुकाने में असमर्थ है तो उसकी सम्पत्ति ऋणदाता द्वारा कुर्क कर ली जाएगी । कृषकों द्वारा समय–समय पर कर न चुकाने के कारण साहूकारों के द्वारा जमीन अपने नाम करवाने के लिए कृषक एवं काश्तकारों को मजबूर कर दिया जाता था । इसके साथ–साथ ये साहूकार जो अब व्यापारी भी बन चुके थे, कृषकों एवं काश्तकारों से सस्ते दाम पर माल खरीदकर उनको मंहगे दामों पर बेचते थे । इस प्रकार साहूकार केवल ऋण से ब्याज ही प्राप्त नहीं करता था अपितु कृषकों में माल से भी अधिक धन कमाता था ।[9] इस क्षेत्र में कृषक वर्ग की दशा बिगड़ती जा रही थी । यहाँ का कृषक वर्ग सरकार और साहूकार के शोषण से बुरी तरह पीड़ित था ।[10]

परन्तु वहीं पर दूसरी ओर ब्रिटिश काल में दक्षिणी–पूर्वी पंजाब में बनिए और व्यापारी भी कृषकों का शोषण करते थे । व्यापारी कृषकों की फसल को सस्ते दामों पर खरीदते थे । साम्राज्यवादी सरकार ने पहले तो यह सोचा कि भूमि का साहूकारों के पास जाना अच्छा रहेगा लेकिन बाद में सरकार के सामने निम्न समस्याएं उभर गई थी जैसे सरकार की भू–राजस्व नीति के कारण कृषकों का बहुत बड़ा वर्ग भूमिहीन हो गया था । जो बारूद की गठरी के समान था । और जिसकी एक चिंगारी साम्राज्य के लिए खतरा पैदा कर सकती थी । यद्यपि इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि ब्रिटिश सरकार ने भी कृषकों की स्थिति को सुधारने के प्रयास किये लेकिन ठोस कदम तो यूनियनिस्ट पार्टी ने ही उठाये और इसमें मुख्य योगदान गरीब–किसानों के मसीहा चौ॰ छोटूराम का था । सरकार ने 1900 ई॰ में लैण्ड एलिनिएशन एक्ट पास किया जिसके तहत कृषकों की भूमि अकृषक जातियाँ नहीं खरीद सकती थी और न ही 20 वर्ष से ज्यादा गिरवी रख सकती थी । इससे कृषकों को तो कोई खास लाभ नहीं हुआ, क्योंकि अकृषकों की जगह अब इनके कृषक भाईयों ने ले ली थी । लेकिन सरकार को एक फायदा यह हुआ कि उच्च कृषक वर्ग सरकार का समर्थक बन गया था ।[11] रजिस्ट्रेशन ऑफ मनी लेण्डर्स एक्ट के तहत सूदखोरों को सरकार के पास अपना रजिस्ट्रेशन करवाना पड़ता था ।

जिससे कृषकों के साथ ज्यादती करने पर रद्द भी किया जा सकता था।[12] इस प्रकार निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि कृषकों को शान्त करने के लिए समय–समय पर कुछ अधिनियम पास किए गए लेकिन इनका वास्तविक लाभ क्षेत्र (दक्षिणी–पूर्वी क्षेत्र) के कृषकों को अधिक नहीं मिलता ये कानून केवल कागजों तक ही सीमित रह जाते थे । इस प्रकार कह सकते हैं कि औपनिवेशिक काल में कृषकों की दशा अत्यंत खराब थी ।

संदर्भ सूची :

1. एस॰ पी॰ शुक्ला, इंडियन फ्रीडम स्ट्रगल एण्ड द रोल ऑफ हरियाणा, पृ॰ 20
2. डॉ॰ के सी यादव, हरियाणा इतिहास एवं संस्कृति, भाग–1, पृ॰ 19–20
3. डिस्ट्रिकट एंड स्टेट गजेटियर ऑफ अनडिवाइडिड पंजाब (प्रायर टू इन्डिपेन्टिड) वोल्यूम–4, पृ॰ 95
4. बुद्ध प्रकाश, गिलिम्पसिस ऑफ हरियाणा, पृ॰ 83–84
5. एस॰ एस॰ थारर्बन, दा पंजाब पीस एण्ड वार, पृ॰ 213
6. यशपाल बजाज, सर छोटू राम, अप्रकाशित शोध ग्रन्थ, पृ॰ 102
7. रघुवेन्द्र तंवर, यूनियनिस्ट पार्टी इन पंजाब, पृ॰ 86
8. तिर्थांकर राय, भारत का आर्थिक इतिहास, खण्ड–2, पृ॰ 25–60
9. बी॰ एस॰ सैनी, द सोशल एंड इकनोमिक हिस्ट्री द पंजाब, 1901–39, पृ॰ 71
10. उपरोक्त, पृ॰ 71–72
11. पंजाब लेजिस्लेटिव असेम्बली प्रोसिडिग्स, 1937–1966, पृ॰ 1930
12. पंजाब बैकिंग इन्कवारी कमेटी रिपोर्ट, 1930, पृ॰ 1930